'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार–मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ७ | वाराणसी, गुरुवार, १५ जनवरी, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

पालनपुर से चित्रासणी जाते हुए मार्ग में

१-१'-५९

अहिंसा के व्यापक होने की युक्ति

आप सबने कल हमारा प्रार्थना-प्रवचन सुना। कई बार पहले-पहल लोगों के ध्यान में ही नहीं आता कि बाबा ने कोई विशेष बात कही है। पहली बार सुननेवाले को तो सभी कुछ नया ही मालूम पड़ता है। किन्तु जिन्हें मेरे प्रवचनों का विशेष अभ्यास हो गया है, उन्हें यह सहज ही ध्यान में आता है कि बाबा ने आज कुछ विशेष बात कही है।

कल वर्ष का अन्तिम दिवस था, इसलिए मैं अच्छी नींद लेकर आया था। नये वर्ष की दृष्टि से थोड़ा बहुत चिन्तन चलता रहा। उसी चिन्तन का कुछ अंश इस प्रवचन में आया।

आज व्यक्तिगत साधना चल नहीं सकती

साधक पहले से ही व्यक्तिगत साधना करते आये हैं। उस समय ऐसी परिस्थिति थी कि व्यक्तिगत साधना चल सकती थी। लेकिन आज की स्थिति में जब उसे हम सामूहिक रूप देंगे, तभी साधना सरल हो सकेगी। व्यक्तिगत साधना के लिए आज की स्थिति में कठिनाई हो रही है। लेकिन उसका हल निकल सकता है। यदि हम सामूहिक गुण हाथ में लेकर उन्हें सामूहिक रूप दें तो वह सरल हो जाय। इससे हमारा ध्यान केन्द्रित होता है और एकाग्रता आती है।

ऐसा न कर यदि हम व्यक्तिगत साधना के लिए कहीं एकान्त में जाकर रहें तो भी वहाँ मन में तरह-तरह के विचार उठते ही रहेंगे। कारण, मन का स्वभाव ही है कि बाहर का समाज दूर हटा दे। फिर भी मन के समाज में राग, द्वेष, मद, मोह, मत्सर आदि विकार हुआ ही करते हैं। इनके साथ मोर्चा लेने के लिए उपवास, मौन आदि करने पड़ते हैं। फलतः यह साधना बड़ी ही कठिन हो जाती है। इससे मानव का सर्वांगीण विकास नहीं हो पाता। मन में एक समाज खड़ा हो जाता है, भले ही बाहरी समाज को आप दूर हटा दें।

अहिंसा में अमर्यादित शक्ति

कई बार देखा जाता है कि हिंसा में जो भय रहता है, उससे बहुत से काम हो जाते हैं। किन्तु हिंसा में भय के द्वारा भले ही काम करने की शक्ति हो, लेकिन उसका आकर्षण भी रहता है, यह नहीं कहा जा सकता। उसका जो उपयोग होता है, इसका कारण यह नहीं कि हिंसा प्रिय लगती है। फिर भी दण्ड-शक्ति के भय से समाज द्वारा काम कराया जा सकता है। किन्तु इस तरह अहिंसा में डराने या बलात्कार करने की शक्ति नहीं है। यह इसकी कमी है या गुण? कई विचारशीलों को लगता है कि अहिंसा में मर्यादा है और हिंसा में अमर्यादा।

किन्तु ऐसी बात नहीं। अहिंसा में अमर्यादित शक्ति है, जब कि हिंसा की शक्ति मर्यादित है। किन्तु अहिंसा की उस शक्ति का किस तरह उपयोग कर लिया जाय, इसका बार-बार चिन्तन करना चाहिए। गुजरात में यह प्रकट रूप में चलता है। मेरे मन में भी प्रायः यह विचार उठता है कि इसका कोई न कोई मार्ग होना ही चाहिए। अतः काम करते-करते चिन्तन करते रहना चाहिए। जब जीवन-शुद्धि हो जायगी, तब यह सूझ पड़ेगा। जीवन शुद्ध होने पर विचार निर्माण होगा और जो समझ में नहीं आता था, वह भी समझ में आने लगेगा।

हम जो थोड़े लोग इस काम में पड़े हैं, वे व्यक्तिगत जीवन त्यागकर सारे समाज का जीवन जीयें, यह पहली बात है। भूदान, ग्रामदान के सेवकों की तरह शान्ति-सैनिकों का भी याने सभी सेवकों का जीवन एक जीवन होना चाहिए। तब हमें सूझ पड़ेगा कि अहिंसा को सामूहिक रूप कैसे दिया जाय?

आत्मिक मण्डल बनायें

हमें सूझता ही नहीं कि इसमें दोष यदि किसीका हो तो वह हमारा ही है। फिर भी सहानुभूतिपूर्वक हमारा दोष प्रकट होता जाय, यह हम नहीं सोचते। इतना ही नहीं, दूसरों का दोष प्रकट हो तो कोई हर्ज नहीं मानते। जिस तरह हमें अपना दोष प्रकट होना पसन्द नहीं पड़ता, उसी तरह दूसरों के दोष भी प्रकट न होने चाहिए। जिस तरह प्रकाश अन्धकार को ढाँक देता है, उसी तरह हमें अपने गुणों से दूसरों के दोष ढाँक देने चाहिए। साथियों से गलती हुई हो तो उसे अपने गुणों से ढाँक देना चाहिए। और हमसे गलती हो तो हमारे साथी उसे ढाँकें। इस तरह अपने गुणों से जो सौ-दो सौ कार्यकर्ता बनेंगे, उन्हें यह अनुभव होना चाहिए कि यह हमारा एक 'आत्मिक मंडल' संघटन है। उसे कोई स्वतंत्र नाम देने की अपेक्षा 'आत्मिक मण्डल' नाम देना ही उचित होगा।

यह व्यापक विश्व-सेवा

संस्कृत में अनेक सुन्दर शब्द हैं। जैसे 'तनय'। यह हमारे शरीर का एक छोटा सा भाग या हमारी आत्मा का विस्तार है। यदि इसी तरह हम सेवकों का भी एक आत्मिक मण्डल बन जाय और उसे हम अपने मन में बैठा लें तो मैं विश्वास करता हूँ कि निश्चय ही अहिंसा के व्यापक होने की युक्ति सूझ पड़ेगी। एक-दूसरे के सुख-दुःख हम सबके सुख-दुःख हों और सब लोगों के विचार हम सबके विचार हों। अपने दोषों की तरह दूसरों के दोष भी प्रकट न करने की वृत्ति हममें आये तो आज के ५०० कार्यकर्ता कल ५००० बन सकते हैं। आत्मिक प्रक्रिया व्यापक होकर ही रहेगी, क्योंकि यह आत्मिक है, दैहिक नहीं। उसके संकुचित होने का तनिक भी भय नहीं। मेरी देह से उत्पन्न सन्तान के विस्तार की बात अलग है। किन्तु हमारा यह विस्तार आत्मिक विस्तार है। उसका स्वरूप किसी तालाब-सा संकुचित नहीं। कारण, हमने सामाजिक काम ही हाथ में उठाया है। इसमें पाँच हजार कार्यकर्ता आयेंगे और एक-दूसरे पर प्रेम करेंगे।

अतः हमारे सेवकों को यह ध्यान रखना चाहिए कि यह किसी तरह का संकुचित काम न होकर व्यापक विश्व-सेवा है।

प्रार्थना-प्रवचन

गुंदी (अहमदाबाद) १६-१२-'५८

ग्राम-स्वराज्य में ही खादी सार्वजनिक हो सकेगी

आप सबको देख मुझे बहुत ही आनन्द होता है। आप लोग सज्जनों के मार्ग-दर्शन में सामूहिक प्रयास करते हैं, सबको मिला-जुलाकर काम करते हैं, यह बहुत ही अच्छा है। इस तरह किसान अपने संघटन बनाकर सामूहिक कार्य करें तो बड़ी ही आसानी से काफी प्रगति हो सकती है।

गुजरात के किसानों की प्रतिष्ठा

लेकिन यदि सभी अलग-अलग काम करें और एक-दूसरे से संपर्क, सहयोग न करें तो काम पूरा नहीं हो सकता। लोगों की यह धारणा चली आयी है कि भले ही हम अलग-अलग काम करें, पर किसीको कष्ट न दें तो बस, धर्म का पूरा काम हो गया। किन्तु यह एकांगी धर्म माना जायगा। परिवार में हम एक-दूसरे को तकलीफ न दें, इतने से ही काम नहीं चलता, बल्कि हमें कुटुम्ब की सेवा भी करनी पड़ती है। परिवार के लोगों के साथ मिलकर काम करना पड़ता है। इसी तरह समाज में भी केवल एक-दूसरे को तकलीफ न देकर अलग-अलग काम करने से नहीं चल सकता। सामूहिक रूप में, एक-दूसरे से मिलकर काम करेंगे, तभी आनन्द मिलेगा। गुजरात के किसान भारत में सबसे अच्छे किसान माने जाते हैं। वे परिश्रमी होते हैं, आलस्य नहीं करते और समझदारी के साथ काम करते हैं। इसलिए यदि वे सामूहिक रूप से भी काम करें, जैसा कि आप लोग करते हैं तो निश्चय ही अति शीघ्र प्रगति हो सकती है।

खादी-विचार : परतन्त्रता के युग में

आज मुझे इससे भी अधिक आनन्द होता, यदि यहाँ आये हुए भाई-बहन खादी का व्यवहार करते और यहाँ खादी पहनकर आते। खादी का विचार सन् १९१८-१९ में चल पड़ा। अब उसे ४० वर्ष हो गये। विज्ञान के युग में चालीस वर्ष कम नहीं कहलाते। इस तरह जहाँ ४० वर्षों से खादी-विचार का प्रसार होता हो, फिर भी आज उसपर विचार करना पड़ता है तो निश्चय ही कहीं बुनियादी दोष, गलती या न्यूनता माननी ही पड़ेगी। अन्यथा ऐसा हो ही नहीं सकता। खादी जैसे सुन्दर विचार पर किसान अमल न करें तो निश्चय ही उसमें कोई बुनियादी कमी होनी चाहिए।

कहना होगा कि खादी का जो मूलभूत विचार था, वह लोगों के समक्ष नहीं रखा गया। इस विषय में जो भी आन्दोलन या कार्य हुए, वे उस दिशा में नहीं, अलग ही दिशा में गये। शहर के लोग खादी अवश्य पहनने लगे, पर वे कातना नहीं जानते। इधर गाँववाले कातना जानते हैं, पर मजदूरी की जरूरत होने के कारण वे उसे शहरों में जाकर बेच देते हैं। जहाँ किसानों को पूरा काम न मिलता हो और जहाँ दरिद्रता के अशुभ लक्षण प्रकट होने लगें, वहीं खादी का काम शुरू हो जाता था। उनसे कम-से-कम मजदूरी पर कतवाकर और बुनवाकर कपड़ा तैयार किया जाता था। उसे शहरवालों के हाथ बेचने पर वे खादीधारी बन जाते थे। फिर वे कांग्रेस के सभासद बन सकते थे। खादी पहनकर स्वराज्य का काम करते थे। इसी तरह खादी उत्पन्न हुई। भले ही वह अलग ढंग से बढ़ी, पर बढ़ी अवश्य। किन्तु इससे खादी का जो मूलभूत विचार था, वह प्रकट नहीं हो सका। वह क्यों नहीं प्रकट हो सका, इसपर चिन्तन और मनन आवश्यक था। किन्तु उन दिनों लोगों के सामने सबसे बड़ी बात देश को परतन्त्रता से छुड़ाना था। उसी ओर सबका ध्यान केन्द्रित था। अतः उस समय यह न हो सका तो आश्चर्य की बात नहीं। इसमें कोई कुछ दोष नहीं दे सकता।

स्वराज्य में खादी सार्वजनिक क्यों नहीं?

किन्तु स्वराज्य के बाद भी खादी क्यों कर सार्वजनिक नहीं हो पायी, इसपर तो चिन्तन करना ही होगा। मैंने इस संबंध में जो चिन्तन किया, उससे इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि जब तक भूमि की समस्या हल न होगी, तब तक खादी सार्वजनिक नहीं हो सकती। जब तक भूमि की मालकियत बनी रहेगी, तब तक गाँवों में समाज बन नहीं सकता। और जब तक समाज न होगा, तब तक सामाजिक संकल्प ही क्या हो सकता है? हिन्दुस्तान में व्यक्तिगत संकल्प तो बहुत हुए, पर सामूहिक संकल्प नहीं हो सकता। इसका कारण यही है कि गाँवों में अभी समाज बन ही नहीं पाया। बच्चे का जन्म ही नहीं हो पाया तो वह अध्ययन कहाँ से करेगा? अभी ग्राम-समाज ही नहीं बना तो लोग ग्राम-संकल्प क्या करेंगे और खादी आदि ग्रामोद्योगों को ही क्या उठायेंगे? जब खादी का ग्राम-संकल्प होगा, तभी वह सार्वजनिक हो सकेगी। सारांश मूलभूत विचार ग्राम-स्वराज्य ही है। उसके होने पर ही खादी आदि की बातें सार्वजनिक हो सकती हैं। वह ग्राम-स्वराज्य ग्रामदान से ही हो सकता है। विज्ञान के युग में ग्राम-स्वराज्य और विश्वराज्य ही टिक सकता है। बीच के सभी लोग हट जायँगे। ग्राम-स्वराज्य हो जाने पर किसानों का सीधे विश्व से संपर्क स्थापित हो जायगा।

आज चिन्तन की कमी

आज हमारे देश की विचित्र स्थिति हो गयी है। हम चिन्तन में पिछड़ गये हैं। ये सभी बहनें लाल-लाल चुनरियाँ पहनकर बैठी हैं। हमारे देश में पुराने जमाने में इससे भी अधिक कला-पूर्ण कपड़े बनते थे। किन्तु ये तो मिलों से बनकर आती हैं और सस्ती पड़ती हैं। इसलिए ये इन्हें पहनती हैं। किन्तु यह सोचा ही नहीं जाता कि इसने हमारे देश की पुरानी कला ही नष्ट कर दी है। इससे बुनकरों की रोजी ही मर जाती है। ये पुरुष भी लाल-लाल फेंटे बाँधे हुए हैं, जो बड़े ही भयानक लगते हैं।

ग्रामस्वराज्य ही एकमात्र तारक

जीवन में परिवर्तन लानेवाली जितनी शक्तियाँ हैं, उनमें दो बड़ी शक्तियाँ हैं और वे हैं : आत्मज्ञान और विज्ञान। विज्ञान के कारण मानव में अत्यधिक परिवर्तन हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में सद्भावना बनाये रखनी हो तो सामूहिक संकल्प को बल चाहिए या सरकारी संरक्षण? सरकारी संरक्षण और सरकारी मदद अलग-अलग चीजें हैं। कहा जाता है कि एक गज पर तीन आना कमीशन देने से सस्ती खादी मिलेगी, उसे सभी खरीदेंगे और खादी काफी चल पड़ेगी। किन्तु यह खादी की पूर्वक्रिया ही कही जायगी। एक पूर्वक्रिया होती है और दूसरी उत्तरक्रिया या मरने के बाद की क्रिया। जैसे आजकल मरने से पहले ऑक्सीजन दिया जाता है, उसी तरह यह मदद खादी के लिए ऑक्सीजन ही होगी। खादी को मदद तो दी जायगी, पर सदा यही सोचा जायगा कि मदद न देनी पड़े तो अच्छा हो। फिर यदि दुनिया में कुछ तेजी आ जायगी तो सरकार कहेगी कि अब हम मदद नहीं कर सकते। फिर तो खादीवाले भी कहेंगे कि आप मदद नहीं दे सकते, अब हम भी खादी को आगे नहीं बढ़ा सकते। इस तरह वे खादीवालों के मुँह से ही कहलायेंगे कि हिन्दुस्तान में खादी तभी चल सकती है, जब कि ग्राम-स्वराज्य का संकल्प होगा। उसकी नींव में ग्रामदान के सिवाय कोई भी चीज नहीं कही जा सकती। इसीलिए मैं कहता हूँ कि यह भाल प्रदेश इस विचार को समझे और ग्रामदान करने के लिए अग्रसर हो। मुझे विश्वास है कि यदि वे यह विचार समझ लेंगे तो निश्चय ही ग्रामदान करेंगे।

ग्रामदान कीजिये

आज यहाँ १७ गाँवों का एक ग्रामदान घोषित हुआ है। पाँच सौ एकड़ जमीन थी। इस ग्रामदान के १७ घरों में से १२ घरवालों ने तो पहले ही हस्ताक्षर कर दिये थे और शेष लोगों ने आज हस्ताक्षर कर दिये। फलतः बात की बात में ग्रामदान हो गया। ग्रामदान के लिए और क्या चाहिए? केवल बातें कीं तो वातावरण बन जायगा। वातावरण बनते ही आवरण हट जायगा और काम बन आयेगा। पहले किसान ग्रामदान की बात सुनकर मुझे लम्बे-लम्बे आवेदन-पत्र देते थे, जिसमें तीन-तीन सौ लोगों के हस्ताक्षर रहते थे। उसमें वे एक ही बात लिखते कि "निस्सन्देह आप बड़े दयालु हैं। आप जान-बूझकर किसीका नुकसान नहीं करते। फिर भी जो ग्रामदान की बात आपने निकाली है, उससे हमें बहुत ही कष्ट हो रहा है, नुकसान हो रहा है। इससे बड़ा भय लगता है। एक ओर से सरकार और दूसरी ओर से आपके लोग—इस तरह हमारा दोनों ओर से पीड़न हो जायगा। कृपा कर ऐसी स्थिति न आने दें।" किन्तु अब ऐसे पत्र नहीं मिलते। अब तो सभी किसान इस विचार को समझ गये हैं। अब तो बड़े-बड़े किसान मुझसे मिलने आते हैं तो कहते हैं कि अब बोलिये मत, हम आपकी बात समझ गये हैं। इतना परिवर्तन हो गया है। जब बात उनके गले उतर गयी तो उसका असर हो ही गया।

विज्ञान-युग में ग्राम-स्वराज्य ही टिक सकेगा

ग्रामदान में किसी भी तरह के भय की गुन्जाइश नहीं। यह तो अभयदान है। ग्रामदान से ही ग्राम-स्वराज्य बनेगा और विज्ञान के जमाने में वही टिक सकता है अथवा विश्वराज्य टिक सकता है। बीच के राज्य नहीं टिक सकते। वह ग्राम-स्वराज्य भी ग्रामोद्योग के आधार पर ही टिक सकेगा और उसमें खादी बहुत बड़ी सहायक होगी।

नवयुग की खादी की कल्पना

यही सब सोचकर बापू ने खादी का विचार रखा था। उन्होंने हमें पुरानी खादी की कल्पना नहीं दी, बल्कि नवयुग की खादी की कल्पना दी थी। लाचारी की खादी और विचार की खादी, दोनों में महान अन्तर है। एक पुराने युग की है और दूसरी नवयुग की। अतः इस युग के अनुसार घर-घर में खादी होनी चाहिए। विज्ञान की प्रगति के कारण अब गाँव-गाँव में अणु-शक्ति का उपयोग हो सकता है, जब कि विद्युत्-शक्ति का गाँव-गाँव में उपयोग नहीं हो पा रहा था। अतः आप विज्ञान-युग के अनुकूल ग्राम-स्वराज्य का विचार मानिये और उसके लिए ग्रामदान कीजिये। तभी खादी का भी ग्राम-संकल्प होगा और गाँव-गाँव, घर-घर खादी प्रतिष्ठित होगी।

खेड़ा जिला के कार्यकर्ताओं के साथ

वासद (बम्बई राज्य) ३१-१०-'५८

जातिभेद और पक्षभेद लोकशाही के लिए खतरे

मध्य-युग में हिन्दुस्तान में किसी भी मनुष्य का परिचय ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि कहकर दिया जाता था, मनुष्य के नाते उसका परिचय नहीं दिया जाता था। तब से अभी तक यह चलता आया है और अदालत में भी नाहक लोगों की जाति पूछी जाती है। फलानी जाति के इतने लोग हैं, इस तरह मर्दुमशुमारी की जाती है। अभी सुनते हैं कि कचहरी में जाति का नाम नहीं लिखा जाता। यह एक बहुत अच्छा निर्णय है, नहीं तो जाति-भेद का अस्तित्व मानकर उसे ज्यादा-से-ज्यादा हम मजबूत ही बनाते और जातिभेद नष्ट न होता।

जातिभेद का नाश

जातिभेद को नष्ट करने का काम बहुत प्राचीन काल से आज तक चलता आया है, अभी तक चलता है तो भी जाति-भेद नष्ट नहीं हुआ। उसके पीछे कोई बल नहीं रहा है तो भी चुनाव की पद्धति ऐसी है कि उसके कारण जातिवाद को बल मिलता है। चुनाव की पद्धति ने जातिवाद को नवजीवन दिया है। इसलिए उसका अस्तित्व है। उसके अस्तित्व के बारे में हमें उदासीन रहना चाहिए और इस तरह बर्तना चाहिए कि जातिभेद मानो है ही

नहीं, तभी वह नष्ट होगा। अपने देश में फैला हुआ यह भेद अब जाना चाहिए। उसके पीछे नैतिक बल अब बहुत नहीं रह गया है। पक्षभेद के कारण अभी उसे बल मिलता है, यह बात अलग है।

मनुष्य का परिचय आज मनुष्य के नाते नहीं होता है। फलाना मनुष्य फलाने पक्षवाला है, इस तरह का 'लेबल' उसके कपाल पर चिपकाया जाता है। यह पाँचवाँ नया वर्ण हो गया है। पहले लोग अलग-अलग काली, पीली, लाल, सफेद आदि रंग की टोपियाँ पहनते थे। अब टोपी में भी चार वर्ण पैदा हो गये। तमिलनाड़ में मैंने काली टोपी देखी। समाजवादियों की लाल टोपी देखी। चार-पाँच साल पहले बहुत टोपियाँ अलग-अलग रंग की लोग पहनते थे। मुझे यह बहुत अच्छा लगता है। एक ही प्रकार की टोपी इतनी सुंदर नहीं दीखती। अलग-अलग आकारवाली और रंगवाली टोपियाँ देखकर बहुत आनन्द होता है।

पक्षभेद जातिभेद से भी भयंकर

एक बार एक सभा में मैंने कहा था कि हर मनुष्य को हर प्रकार की टोपी पहननी चाहिए। बुधवार को लाल, गुरुवार को सफेद, शनिवार को काली—इस तरह अलग-अलग रंग की टोपी पहनें तो टोपी को आदर मिलेगा और टोपी के पीछे का नैतिक बल चला जायगा। फिर फलाने रंग की टोपी फलाने पक्ष की है, ऐसा नहीं माना जायगा। एक ही मनुष्य कई रंगों की टोपी बदल-बदलकर पहनेगा तो सौन्दर्य बढ़ेगा, आनन्द बढ़ेगा और भेद नष्ट हो जायगा। इस तरह से नये प्रकार के जातिभेद बढ़ रहे हैं और पुराने जातिभेद से ज्यादा भयानक हो रहे हैं। पुराने जाति-भेद के पीछे अब कुछ खास बल नहीं रहा है। आज पक्षभेद बहुत बढ़ रहे हैं। पक्ष भले ही रहें, परन्तु पक्षभेद की जरूरत नहीं है। जीवन में पक्ष का स्थान होना चाहिए, इसका ग्रहण सामान्य मनुष्य को करना चाहिए। ऋग्वेद में एक श्लोक आता है, जिसमें कहा है कि हे सुमेधः, "हे बुद्धिमानो, आप मानवता का ग्रहण कीजिये, मानव का स्वीकार कीजिये।" वेद सिखाना चाहता है कि अगर हम मानव का ग्रहण न करेंगे तो वेद की दृष्टि से हम बेवकूफ साबित हो जायँगे। दूसरी बातें चाहे जो हों, परन्तु हमें तो मानव को मानव की दृष्टि से ही ग्रहण करना चाहिए। तभी हिन्दुस्तान के सवालों का हल होगा और दुनिया के भी बहुत-से सवालों का हल निकलेगा।

विज्ञान और आत्मज्ञान

विज्ञान-युग में मानवता को सीधी तरह से, सरलता से ग्रहण करने की बुद्धि जब तक हमें नहीं आयेगी, तब तक मनुष्य की बुद्धि विज्ञान-युग के साथ टकरायेगी और उसके सामने वह नहीं टिकेगी। विज्ञान के आगे किसी तरह के भेद टिक नहीं सकते हैं। आत्मज्ञान के सामने भी भेद नहीं टिक सकते हैं। इस तरह विज्ञान और आत्मज्ञान, ये दोनों ऐसे भेदों पर सीधा प्रहार करते हैं। आत्मज्ञान सीधा प्रहार करता है, क्योंकि वह आत्मा की उन्नति की दृष्टि से देखता है। विज्ञान इह-लोक में मानव किस तरह टिक सकता है, इसका दर्शन कराता है। वह कहता है कि अगर आप भेद और संकोच रखेंगे तो फिर मानव को ग्रहण नहीं कर सकते और उसके कारण परस्पर द्वेष फैलेगा और उसका परिणाम पहले से ज्यादा भयानक आयेगा।

परस्पर हितों में विरोध होता है, तब जनता त्रस्त हो जाती है और प्रभु के बदले में लश्कर की शरण जाती है। वह लश्कर के पास नहीं जाती, लश्कर स्वयं उसे ले जाता है और तब थोड़ी देर के लिए सारे भेद मिट जाते हैं। फौजी शासनवाले देश यह बात साफ जाहिर कर रहे हैं कि सारे राजनैतिक पक्ष एकदम खत्म होने चाहिए। मानव की दृष्टि से भेद मिटाने की जरूरत है। मानव उसे सीधी तरह से नहीं मिटाता है तो वे दूसरी तरह से मिटते हैं। काला बाजार, रिश्वतखोरी वगैरह बन्द होना बहुत जरूरी है। वह सीधी तरह से बन्द नहीं हो सकती तो दूसरी तरह से बन्द होगी, ऐसा मानने की लोगों को प्रेरणा हो रही है, क्योंकि मानव त्रस्त हो रहा है और त्रस्त मानव आश्रय ढूँढ़ता है। यह खतरा हरएक देश में है। आज आप नहीं कह सकते हैं कि अखबारों में आपको किस दिन कौनसा चित्र देखने को मिलेगा। जनता को इसमें कोई रस नहीं है कि समाजवाद अच्छा है या साम्यवाद।

लोकशाही कैसे टिकेगी ?

लोकशाही तब तक स्थिर नहीं होगी, जबतक वह अपना बचाव खुद नहीं कर सकती। आज तो लोकशाही के बचाव के लिए लश्कर की जरूरत होती है। लोकशाही में रक्षण-शक्ति अगर लश्कर ही हो तो कभी भी उसका रक्षण नहीं हो सकेगा। रक्षण तो तभी हो सकेगा, जब कोई भी सिद्धान्त स्वरक्षित हो और रक्षण के लिए उसे किसी तरह से किसी भी बाहरी तत्त्व की मदद न लेनी पड़े। लोकशाही में मुख्य तत्त्व यह है कि प्रत्येक मनुष्य को एक तत्त्व का बोध है। मानव-आत्मा की एकता याने आध्यात्मिक सिद्धान्त के आधार पर ही हम उसका बचाव कर सकते हैं। दूसरे किसी सिद्धान्त के आधार पर उसका बचाव नहीं हो सकता है। इस बारे में बड़े-बड़े राजनैतिक नेताओं के साथ मैंने चर्चा की है, परन्तु इसका बचाव वे दूसरे किसी तरीके से नहीं कर सके हैं।

आध्यात्मिक तरीके से उनका बचाव हो सकता है। मनुष्य की आत्मा की एकता बिल्कुल सामान्य वस्तु है, परन्तु बुद्धि तो हरएक में कम-ज्यादा होती है। शक्ति भी हरएक में कम-ज्यादा होती है। तो आत्मा की एकता के सिद्धान्त पर यह बात चल सकती है। जब आत्मैक्य के महासिद्धान्त पर लोक-मानस स्थिर होना चाहता है, तब सिद्धान्त के बाहर जाकर वह पर-रक्षित होना चाहेगा तो टिक नहीं सकेगा। अलग-अलग पक्ष अपने-अपने प्रयोग करते हैं। परन्तु इसमें से कोई चीज निर्माण नहीं होती है। जब तक हम अपने तत्त्व के रक्षण के लिए अन्तर्गत शक्ति निर्माण नहीं करते हैं, तब तक कुछ न होगा। अभी-अभी सन्तबालजी के एक भाई ने कहा कि विनोबा चाहता है कि सेना मिटनी चाहिए। मैं यही चाहता हूँ, क्योंकि मैं तो अहिंसक हूँ। सेना की मैं इच्छा नहीं करता हूँ। पर लोगों को बहादुर होना चाहिए, कायर नहीं होना चाहिए। लोग कायर होंगे तो नहीं चलेगा। परन्तु जब लश्कर बढ़ेगा, तब मनुष्य की कायरता बढ़ेगी, यह समझना बाकी है। लश्कर से राष्ट्र का पराक्रम नहीं बढ़ता है, राष्ट्र कायर ही होता है।

मान लो कि बाहर लड़ाई हो रही है और एकदम तार आया और अखबारों में भी छप गया कि अपने लश्कर को पाँच मील पीछे हटाना पड़ा तो फिर सभी लोग एकदम घबड़ा जायँगे। उसका परिणाम यह होगा कि शेअर बाजार भी एकदम बन्द हो जायगा। सारी चीजों के भाव एकदम गिर जायँगे। अगर लश्कर पचास मील अन्दर आयेगा तो हाहाकार मच जायगा।

बापू की दीर्घ दृष्टि

ऐसी लड़ाई में मान लो कि एक बार अहमदाबाद पर

एक बम पड़े तो यहाँकी मिलें क्या चलती ही रहेंगी? सारे मजूर एकदम भाग जायँगे। मैं कहना चाहता हूँ कि बम की भी जरूरत नहीं है। लोगों को इतना ही पता चले कि अहमदाबाद असुरक्षित है तो तुरन्त ही सारे मजूर भाग जायँगे। एक भी मजूर वहाँ नहीं रहेगा। फिर हम सबको नंगे रहने का प्रसंग आयेगा। हमें पहनने के लिए कपड़ा नहीं मिलेगा। इसलिए बापू ने दीर्घ दृष्टि से कहा था कि कपड़े जैसी चीज घर के बाहर से नहीं लानी चाहिए। यह चीज घर में से पैदा होनी चाहिए। यह बात रहस्य-दर्शन नहीं है, दीर्घदर्शन है। इस युग में तभी रक्षण हो सकेगा, जब जीवन की यह मुख्य-मुख्य आवश्यकताएँ अपने हाथ में रहेंगी। अपने गाँव का रक्षण इसीसे होगा। राष्ट्र का भी रक्षण इसीसे होगा। नहीं तो सारी शक्ति एक ही जगह पर केन्द्रित की जायगी। तब एक अहमदाबाद के बचाव के लिए सारा राष्ट्र सुसज्जित करना होगा और वह भी आज की पद्धति से याने आधुनिक पद्धति से सुसज्जित करना होगा। इसका अर्थ यही है कि इस वक्त पैसे की चर्चा न करनी पड़े तो यह कोई लोक-शक्ति का बल कहा जायगा क्या?

लोकशाही, कम्युनिज्म, समाजवाद--एक हैं

लोकशक्ति को बाहर से बल है, इसीलिए लेनिन कहता था कि हम तो सिर्फ एक ही बार शस्त्र का उपयोग करेंगे और फिर सारे शस्त्र बाँट देंगे। पर आज रूस में सारी प्रजा के हाथ में शस्त्रास्त्र हैं क्या? मुट्ठीभर लोगों के हाथ में पहले शस्त्र आ गये। कम्युनिस्ट हों या दूसरे कोई, सारी प्रजा को शस्त्र क्यों देंगे? होगा यही कि जिनके हाथों में शस्त्र हैं, उन्हींका राज्य होगा। आज रूस में लश्करशाही ही चल रही है। दूसरी कोई शाही वहाँ चलती है क्या? दूसरे देशों में भी लश्करशाही का भास नहीं होता है; इतना ही है; परन्तु भाप, पानी और बरफ, ये तीन चीजें नहीं हैं, एक ही चीज की तीन अवस्थाएँ हैं। एक हालत में उसे 'बरफ' कहते हैं, जो जरा घनरूप है। दूसरी हालत में उसे 'पानी' कहते हैं, जिसका रूप द्रवित है, प्रवाहित है। तीसरी अवस्था में उसे 'भाप' कहते हैं, जो ऊपर जाती है। एक ही चीज के ये तीन नाम हैं। इसी तरह से एक ही वस्तु का नाम है—लोकशाही, कम्युनिज्म और समाजवाद। गांधीवाद में भी जब तक लोग लश्कर से रक्षण चाहते हैं, तब तक मैं यही कहूँगा कि वे केवल नकली गांधीवादी हैं। जरा समझना चाहिए कि हम कहलायें गांधीवादी और फिर गांधीजी का ही आधार दें कि जब कश्मीर में लश्कर भेजा गया था, तब गांधीजी ने उसे आशार्वाद दिया था! हमें अक्षरार्थ नहीं लेना चाहिए। अक्षरार्थ लेंगे तो प्रगति कुंठित होगी। शस्त्र-बल की योग्यता के लिए, उसका महत्त्व बताने के लिए गांधीजी के अभिप्राय की जरूरत क्या है? शस्त्र-बल की महिमा, योग्यता का समर्थन करने लिए महाभारत काफी नहीं है क्या? गीता का आधार लेकर भी बहुत लोग शस्त्र का समर्थन करते हैं। तो फिर गांधीजी का आधार ज्यादा क्यों माना जाता है? गोड़से ने गांधीजी का कतल किया। वह कौन था? जिसका कतल किया, वह भी गीता प्रेमी था और जिसने कतल किया, वह भी गीता-प्रेमी ही था दो गीताप्रेमी एक-दूसरे के आमने-सामने खड़े हुए। एक कहता है कि गीता में अहिंसा-तत्त्व है, दूसरा कहता है कि गीता में धर्म के लिए हिंसा भी करने के लिए कहा है और मैं धर्म के लिए ही हिंसा कर रहा हूँ। अब क्या कहा जाय? हम चाहे जो आधार दे सकते हैं, परन्तु इस तरह के आधार की कुछ जरूरत नहीं है। विज्ञान के जमाने में हम यह भूल नहीं सकते हैं कि जो शस्त्रास्त्र आज मनुष्य के हाथ में हैं, वे मनुष्य का पूर्ण नाश करेंगे। गांधीवाद से जिन्हें प्रेम है, उन्हें अभी यही विचार करना चाहिए कि हम किस तरह सेना-मुक्त हो सकते हैं।

सैनिक शक्ति की व्यर्थता

यह एक भासमात्र है कि देश के लिए सेना होगी तो कोई कायर नहीं रहेगा। यह गलत बात है। अगर देश सेना पर सारा आधार रखता है तो सारा देश कायर बनता है। पलासी की लड़ाई में केवल बंगाल में सारे बंगाल का और सारे भारत का फैसला हो गया। एक ही लड़ाई में—साढ़े तीन घंटे में इतना बड़ा फैसला हो गया। उस लड़ाई में एक बाजू क्लाईव था और उससे लगभग दो-तीन फर्लांङ्ग दूर दूसरी बाजू पर दूसरी सेना थी, जिसमें पचास हजार मनुष्य थे। क्लाईव के पास तो सिर्फ पाँच हजार मनुष्य थे, परन्तु क्लाईव के पास आधुनिक शस्त्रास्त्र थे और भारत की सेना के पास वे नहीं थे। केवल एक ही रणक्षेत्र में सिर्फ साढ़े तीन घंटे में सारे राष्ट्र का फैसला हो जाता है, यह क्या है? हमें भी अपने सारे देश को शस्त्र पर रखना हो तो इस तरह की घटना हम टाल नहीं सकेंगे। पिछले महायुद्ध में जर्मनी ने हिटलर के हुक्म से क्या किया? बीस-तीस लाख सैनिक एक ही दिन में दूसरे देश पर टूट पड़े। दस-पंद्रह दिन बाद उसी देश ने जब यह देखा कि हमारा देश अब जीत नहीं सकता, सामनेवाले देशों के हाथ में मजबूत शस्त्रास्त्र हैं तो लाखों सैनिक एक ही दिन में हुक्म होने पर शत्रु की शरण चले गये। इसमें भला कौनसा शौर्य है? उनके हाथ में तो शस्त्रास्त्र थे। शौर्य का सवाल ही कहाँ था? चार साल बाद फिर वही हुआ। तीस लाख की सेना को उसके जनरल ने आज्ञा दी कि आप लोग शरण जायँ। तो सबने अपने हथियार डाल दिये और नमस्कार करके सब शरण चले गये। इसमें शौर्य क्या था? अतः इस भ्रम में न रहिये कि हम सेना रखेंगे तो हमारी कायरता मिट जायगी। कुछ लोग कहते हैं कि लड़कियाँ और स्त्रियाँ कमजोर हैं, उनके हाथ में अगर हम हथियार देंगे तो वे शूर बनेंगी।

मैं पूछना चाहता हूँ कि सीता लंका में गयी थी तो अपने हाथ में हथियार लेकर गयी थी क्या? रावण बात करने के लिए सीता के पास आया तो सीता ने उसके और अपने बीच में एक तृण रखा और कहा कि तेरी कीमत मैं तिनके के जितनी मानती हूँ। रावण उसे कुछ नहीं कह सका। सीता के पास शस्त्रास्त्र कहाँ थे? सीता को जब रावण ने उठाया, तब उसके पास केवल राम-नाम का ही भरोसा था। मुझे अगर राम-नाम का भरोसा नहीं होगा और मैं छुरी लेकर जाऊँगा तो मेरी छुरी की वीरता कहाँ तक टिकेगी? और राम भी इसके लिए क्या करेंगे? बिल्ली अपने सामने चूहा देखकर अपनी आँखें, नाक-दाँत, पंजे आदि उठाकर जो स्वरूप प्रकट करती है, वह रुद्रावतार ही होता है। परन्तु अपने सामने जब वह कुत्ता पाती है तो उसकी क्या दशा होती है? तो बिल्ली शूर है कि कायर? सामने कमजोर होता है तो वह शूर बनती है और सामने बलवान होता है तो वह कायर बनती है। इसे क्या कोई शौर्य कहेंगे? सिंह इतना बड़ा बहादुर कहलाता है, पर उसकी भी हालत वही है। सामने बंदूक देखकर वह भाग जाता है।

सेना हटाने की बात सोचें

सेना अगर हम कम नहीं कर सकते हैं तो हमें कबूल करना होगा कि हमारा हिंसा पर भरोसा है। आज के आज ही सेना कम हो जाय और सेना निकाल दो, ऐसा मेरा कहने का मतलब नहीं है। मैं यह कहता हूँ कि किसी भी तरह का खतरा उठाये बिना

आज जितनी सेना है, उससे आधी कर सकते हैं। राजाजी भी इसे मान्यता देते हैं। राजाजी तो पक्के 'पोलिटिशियन' (राजनीतिज्ञ) माने जाते हैं, व्यावहारिक मनुष्य माने जाते हैं और मैं तो सपने में रमनेवाला एक 'विजनरी' (कल्पनाशील) मनुष्य कहा जाता हूँ। फिर भी मुझमें और राजाजी में मतभेद नहीं है। मैं तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि आज सेना भले ही रहे, परन्तु कल तो वह नष्ट होनी चाहिए न? आज अगर वह चलती है तो आगे चलकर उसे कम करना है, यह आप सोचिये। जब तक शस्त्र का आधार आप नहीं छोड़ेंगे, तब तक यह कभी नहीं हो सकेगा। इसलिए हमें देश के अन्तर्गत अहिंसा की शक्ति खड़ी करनी चाहिए, भले ही इसमें पाँच-दस साल लगें। परन्तु कम-से-कम देश की आंतरिक शांति के लिए पुलिस या लश्कर का उपयोग न करना पड़े, यह बात अगर भारत में सिद्ध हो जाय तो फिर अन्तर्राष्ट्रिय क्षेत्र में अहिंसा किस तरह प्रवेश करेगी, इसका दर्शन होगा। आज तो भीतरी क्षेत्र में पुलिस की मदद लेनी पड़ती है। अहमदाबाद में दंगा चलता है और लोग घर में बैठे हैं, फिर भी हम गांधीवादी कहलायें, इसका माने क्या है? वहाँ ऐसा कोई खड़ा न हो कि जो बीच में जाकर कहे कि यह आप क्या कर रहे हैं? लोग कहते हैं कि अहमदाबाद में लोगों ने खादी-भंडार जलाया। परन्तु मेरी समझ में नहीं आता है कि ऐसा कोई आदमी क्यों नहीं खड़ा हुआ, जो कहता कि "भाई, खादी को जलाने के पहले तू मुझे जला दे।" इसका मतलब यही है कि हम देश की भीतरी परिस्थिति में अभी तक पुलिस के बिना काम नहीं कर सकते हैं। हमने सारे राष्ट्र की जिम्मेवारी सरकार पर सौंप दी है और हम घर बैठ गये हैं। यह ठीक नहीं।

खादी के पीछे अहिंसा का विचार

सब लोग अगर सरकार पर आधार रखेंगे तो क्या खादी बढ़ेगी? सरकार की मदद से वह थोड़ी-बहुत चलेगी, परन्तु सोचने की बात है कि ऐसी खादी चलेगी तो अहिंसा टिकेगी क्या? आज की स्थिति ऐसी है कि खादी अपना पालन-पोषण करती है। वस्तुतः हम विचार करें तो खादी कोई कपड़ा नहीं है। खादी तो विचार है। उसके पीछे अहिंसा का विचार रहा है और वह वीरों की अहिंसा का विचार है, कायर की अहिंसा का विचार नहीं है। हम सब उसके लिए कुछ करते हैं कि नहीं? इसपर जब मैं विचार करता हूँ तो मुझे बहुत दुःख होता है। बड़ी पीड़ा होती है। गांधीजी को गये दस साल हो गये। वे स्वयं शांति-सैनिक बने, स्वयं शांति-सेना के सेनापति बने और अपने खुद का बलिदान देकर चले गये। हम उनके सेवक कहलाते हैं, पुत्र कहलाते हैं, उनके अनुयायी कहलाते हैं, उनके शिष्य भी कहलाते हैं। पर उनकी तरह हम आज क्या कर रहे हैं?

गुजरात शांति-सेना खड़ी करे

गुजरात को मेरा आवाहन है कि यहाँ शांति-सेना खड़ी होनी चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं करना चाहिए कि जब समाज में अशांति हो, तभी शांति-सेना का काम हो। वैसे आज तो सर्वत्र अशांति ही फैली है। कचहरी में गाँव से कुछ मुकदमे आते हैं। गाँव में अगर शांति-सेना काम करेगी तो वहाँसे कचहरी में मुकदमे क्यों आने चाहिए? सारे झगड़े गाँव में ही आपस-आपस में क्यों नहीं मिट जाने चाहिए? गाँव के झगड़ों का निपटारा गाँव में ही क्यों नहीं होना चाहिए? और शहर के झगड़ों में भी सेवक बीच में पड़कर उनका निबटारा क्यों नहीं कर दें? मतलब, शांति-सेना सामान्य समय में भी बहुत काम करेगी और विशेष प्रसंग में तो अपनी जान को जोखम में डालकर जो करना है, वह करेगी। बाकी के समय में शांति-सेना भक्ति-सेना बनेगी। ऐसी सेना गुजरात प्रान्त में खड़ी करनी है। मैं चाहूँगा कि मैं जब प्रांत छोड़ूँ, उसके पहले इस प्रान्त में साढ़े तीन हजार शांति-सैनिक आप मुझे दें और गुजरात में हमें सेनापति ढूँढ़ने जाना नहीं है। शान्ति-सेना का सेनापति गुजरात में रविशंकर महाराज हैं ही। परन्तु यह सेनापति ऐसा ही है कि इसके पीछे कोई सेना ही नहीं है। अकेला-अकेला आगे चला जाता है। पीछे कोई आता है कि नहीं, यह देखता ही नहीं है। ऐसा कहीं चलता है क्या? आपने बूढ़े मनुष्य को सेनापति बना डाला, यह अच्छा है।

हिंसा-अहिंसा के युद्ध में अन्तर

अहिंसा के युद्ध में और हिंसा के युद्ध में यह बहुत बड़ा फर्क है। हिंसा के युद्ध में जो बिल्कुल नालायक होते हैं, वे बचते हैं। पचीस-पचीस साल के जवान लड़ाई में जाते हैं। वे अगर मर जायँगे तो चौबीस सालवाले जाते हैं और वे भी मर जायँगे तो सोलह या पन्द्रह सालवाले सेना में भरती किये जाते हैं। उनसे कहना होगा कि आप मर जाइये और साठ-पैंसठ सालवाले लोगों से कहा जायगा कि आप जुग-जुग जाओ। आपको सेना में दाखिल नहीं करेंगे। हिंसक लड़ाई में वृद्ध लोगों के लिए अवकाश नहीं है। वहाँ जाने के लिए जो लायक हैं, उन्हें मरना है और मरने के लिए जो लायक हैं, उन्हें नहीं जाना है। परन्तु अपनी अहिंसक लड़ाई में तो मेरे जैसे और महाराज जैसे मरने लायक मनुष्य जा सकते हैं और जो मरने की बिलकुल सीमा पर आये हैं, उनको भी उसमें दाखिल कर सकते हैं। इसमें जवान लोग ही दो कदम इस बाजू और दो कदम उस बाजू होंगे। इसलिए इसमें वृद्ध पुरुषों को दाखिल होना चाहिए। इसके अलावा जिन्हें 'अबला' कहा जाता है, वे अहिंसा की लड़ाई में बलवान् कही जाती हैं। तारिणी शक्ति कहलाती है। स्त्रियाँ इसमें बहुत काम कर सकती हैं। अहिंसा की लड़ाई में यह खूबी है कि इसमें सब आ सकते हैं। हिंसा की लड़ाई में तो बत्तीस इंच छातीवाले जा सकते हैं, परन्तु यहाँ ऐसा नहीं है। यहाँ तो तीस इंच चौड़ी छाती चल सकती है। इसलिए सारा राष्ट्र इसमें भरती हो सकता है। सबमें वीरता का, पराक्रम का संचार हो सकता है। यह अहिंसा से ही हो सकता है। छोटे-छोटे लड़के भी इसलिए तैयार हो सकते हैं और काम में आ सकते हैं।

अहिंसक की हिम्मत

शाकुन्तल में यह बात आती है। दुष्यन्त राजा शिकार के लिए आता है और हिरन के पीछे जाकर बाण मारने की तैयारी करता है। कण्व मुनि के आश्रम में हिरन को मारने की मनाही है। इसलिए राजा को देखते ही एक लड़का एकदम कहता है कि 'आश्रममृगो न हन्तव्यो न हन्तव्यः' यह आश्रम का मृग है, इसलिए इसे नहीं मार सकते हैं। राजा को वह छोटा-सा बालक रोकता है और उस बालक के कहने से वह राजा एकदम रुक जाता है। उसे लगता है कि बात तो ठीक है, आश्रम के मृग को मार नहीं सकते हैं। एक छोटा-सा बालक इतने बड़े राजा के सामने खड़ा होकर कहता है कि 'तुम आश्रम के हिरन को नहीं मार सकते हो'—यह जो हिम्मत है, यह अहिंसक की हिम्मत है। वह अहिंसा की शक्ति थी।

छोटे बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ, पंगु—सब लोग इस लड़ाई में आ सकते हैं और जवान लोग, जिनके शरीर में बहुत बल है, वे तो आ ही सकते हैं। सर्वोदय में सब लोग आ सकते हैं। शांति-सेना में सारे हिंदुस्तान में

पचहत्तर हजार की माँग की है। उससे ज्यादा भी लोग भरती हो सकते हैं। पौने दो करोड़ का गुजरात अहिंसा की सेना में क्यों दाखिल नहीं हो सकता है? इतनी सुविधा की सेना में साढ़े तीन हजार सैनिकों की माँग ज्यादा मानी जायगी क्या? ऐसी सेना यहाँ होगी तो भूदान, ग्रामदान का विचार लोगों के पास पहुँचाने में मदद मिलेगी।

सुविधावाली सेना में भरती हों

सेना की चर्चा करते हुए अभी एक बड़े पुरुष ने बताया कि जनरल थिमैया ने एक बार कहा था कि सेना को खेती का काम देना सेना का दुरुपयोग है। उससे सेना का सेनापन कम हो जाता है। सेना को तो 'एक-दो', 'एक-दो' ही करना चाहिए। वह दो-तीन घंटे काम करेगी तो शरीर में तेज नहीं रहेगा। फिर उसका कोई उपयोग नहीं होगा।

एक बार कुछ बुनकरों से, जो बिल्कुल पतली-पतली साड़ियाँ बनाते थे, मैंने पूछा कि "आप सब लोग बुनते हैं, यह तो अच्छा है, परन्तु खेती के काम में दो-तीन घंटा आप देंगे क्या?" उन्होंने कहा कि "हमसे यह नहीं बनेगा, क्योंकि खेती का काम 'रफ' काम है और हमारा काम जरा नाजुक है। हमारा कला का काम है। हम अगर खेती का काम करते हैं तो हमारे हाथ की कला, हमारी अँगुली की कला चली जायगी।" इसी तरह सेना में भी विचार करते हैं तो सैनिकों को दूसरा-तीसरा काम अगर देंगे तो उनकी शूरता कम हो जायगी। इसलिए हमेशा के लिए उन्हें खाली रखना चाहिए और उन्हें भरपूर पोषण देना चाहिए। देश के रक्षक के तौर पर उनको फुरसत भी देनी चाहिए। हिंसक सेना की ऐसी हालत होती है, परन्तु अहिंसक सेना बिल्कुल सुविधा-वाली है। उसमें पंगु, बीमार, जवान, वृद्ध, स्त्री, बालक—सब दाखिल हो सकते हैं। ऐसी सुविधा की सेना में केवल साढ़े तीन हजार सैनिकों की माँग कोई कठिन काम नहीं है। आपको यह काम पूरा करना चाहिए। लश्करवाली सेना कुछ भी न करे तो चलेगा, परन्तु यह सेना तो सामान्य समय में भी बहुत सेवा कर सकती है। वह बाकी के समय में सेवा करेगी और वक्त पर शांति-सेना का काम करेगी।

सरदार के इस जिले में मेरी माँग के अनुसार सेवक मुझे मिलने चाहिए। उसके बाद मुझे यहाँ से बिदा कीजिये। ● ● ●

नवजीवन प्रेस के भाइयों के साथ

अहमदाबाद २१-१२-'५८

सर्वोदय के विचार को अमल में लाकर दिखायें

बहुत ही खुशी की बात है कि सबेरे ही सबेरे ज्ञान-प्रचारक भाइयों के दर्शन हो रहे हैं। नवजीवन का जो काम हो रहा है, वह पूरे भारत के लोगों को मालूम है और वह बहुत ही सहायक हो रहा है। मुझे प्रसन्नता हो रही है कि वे एक मिशन समझकर, एक यज्ञ समझकर यह काम करते हैं।

तेरा मकान आला

अभी यहाँके भाइयों ने कहा कि मैं अपने ही घर आया हूँ। यह बात सही है, फिर भी मैं पहली ही बार अपने इस घर में आया हूँ। मेरा खयाल था कि नवजीवन का कोई मकान बना है और वह नदी के उस पार होगा। यानी मुझे अपने घर की इतनी खबर नहीं थी कि मकान कहाँ है। लेकिन यह दोष मेरा नहीं और न नवजीवन का ही है। यह दोष गांधीजी का है। उन्होंने हमें इतना बड़ा मकान दिया कि उसमें रहनेवाले दस-दस, पाँच-पाँच साल में मुश्किल से एकआध बार मिल सकते हैं। इतना विशाल घर, परिवार उन्होंने बनाया कि परिवार के सभी मनुष्यों का परिचय भी पूरा नहीं हो सकता। ऐसा बहुत बार होता है। टामस एकेम्पिस नाम के एक महान् लेखक हो गये हैं। उन्होंने 'इमीटेशन आफ क्राइस्ट' नाम के पुस्तक में लिखा है कि "परिचय की जरूरत नहीं है—आदर की जरूरत होती है। असंख्य लोगों के साथ परिचय नहीं हो सकता; लेकिन सभीके लिए आदर होना ही चाहिए।" यानी परिचय से भी आदर विशेष मूल्यवान वस्तु है। सभीको यदि हम आत्माभाव से देखें, तो हमें ऐसा अनुभव और ऐसी प्रतीति होगी कि अपने ही स्वजन सर्वत्र हैं। यह अनुभव सत्य है या मिथ्या, इसकी परीक्षा मैंने भूदान-यज्ञ में शुरू की है। यदि मेरे मन में सभीके लिए आदर होगा तो सभी इसमें प्रेमपूर्वक अपनी आहुति देंगे। मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता होती है और भारत के लोग भी यह स्वीकार करेंगे कि मेरे हृदय में उनके लिए आत्मभाव है। हरएक के लिए यही आत्मभाव होना चाहिए।

सूद लेना बन्द करें

निःसंशय ही यह मेरा घर है। यहाँसे बहुत सी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, जिनका भारत को बहुत उपयोग है। यह मकान भी बहुत बड़ा बना है, इसमें खर्च भी हुआ है और दुर्दैव है कि इसका ब्याज भी देना होता है। मैं सूदखोरी को महापापों में से एक पाप गिनता हूँ। सूद लेने और देने का सर्वोदय-समाज में स्थान नहीं हो सकता, लेकिन यह तो उस समाज की बात हुई, जो समाज हम भविष्य में बनाना चाहते हैं। आज ऐसा समाज नहीं बन सका है, उसमें सूद का भी बहुत बड़ा हिस्सा है। जब मैंने सुना कि सरकार भी तकाबी पर ब्याज लेती है तो मुझे बड़ा सदमा पहुँचा। फिर भी वह लेती है, क्योंकि व्यापार तथा व्यवहार में सूद लिया जाता है और सरकार उसी समाज से बनी है। वह यदि सूद लेना छोड़ दे तो मूर्खता ही मानी जायगी। सरकार ब्याज लेती है, इतना ही नहीं, लेकिन सेवा-संघ भी जब एक-दूसरे की सहा-यता करते हैं तो वे सूद लेते हैं। चरखा-संघ के पास पैसा ज्यादा हो और वह यदि ग्रामोद्योग-संघ को दे तो उसका सूद लेगा, चाहे वह थोड़ा ही हो; लेकिन बिना सूद के देना वह मान्य नहीं करेगा। पर मैं तो कहता हूँ कि उससे बिल्कुल ही उल्टा होना चाहिए। यदि उपयोगी कामों के लिए पैसा रखा है और वह उपयोग में नहीं आ रहा है, पर देश के लिए उसका उपयोग करना जरूरी है तो मुझे वह रकम आपको देनी चाहिए। आप उसे जब वापस करें, तब मुझे कम दे सकते हैं; क्योंकि आपने उसका श्रेष्ठ उपयोग किया। इस तरह सूद लेने की जगह सूद घटाने की ओर समाज को ले जाना है और ऐसा समाज हमें बनाना है, जिसमें सूद न रहे। वह समाज इस सूद लेनेवाले समाज में से ही बनाना होगा।

इसके लिए ऐसे सेवकों की जरूरत है, जो पुल का काम करें और दोनों किनारों के साथ सम्बन्ध रख सकें। संस्थाएँ ऐसा पुल

बन सकती हैं और वहाँसे ऐसा विचार-प्रचार हो सकता है। इस संस्था का सूद लेनेवाले और सूद न लेनेवाले, दोनों समाजों से संबंध है। अभी तो सूद देना होगा, लेकिन यहाँसे जो पुस्तकें निकलती हैं, उनके लिए संपत्ति-दान का उपयोग भी किया जा सकता है। इतनी बड़ी संस्था पर जो भी कर्ज हो, उसे धनवान क्यों न चुका दें; लेकिन अभी ऐसा समाज बना नहीं है। सरकार टैक्स लेती है, इसके अलावा सार्वजनिक काम, छात्रालय आदि में भी दान देना होता है, इसलिए व्यावहारिक लोग सूद छोड़ना कबूल नहीं करेंगे, जब कि सूद का बहुत बड़ा निषेध मुहम्मद साहब जैसे महापुरुष ने किया है। कुरान में पाँच-सात बार यह वाक्य आया है कि "तुम सम्पत्ति बढ़ाने के लिए सूद क्यों लेते हो, सूद से सम्पत्ति नहीं बढ़ती, दान से बढ़ती है।"

आदर्श के अनुरूप जीवन बनायें

मैं जानता हूँ और आप भी जानते हैं कि एक तरह से आप लोग दुविधाजनक स्थिति में हैं। इसलिए इसे जितना सरल कर सकते हैं, उतना कीजिये। यहाँसे जो ज्ञान-प्रचार हो रहा है, उसके अनुकूल आप सभीका जीवन जब भारत को दिखाई देगा, तब भारत और दुनिया दोनों पर बड़ा असर होगा।

एक बात मेरे मन में आती है और उसे कहने या न कहने की दुविधा होती है। लेकिन यदि वह शक्य हो तो आप लोग उसे अमल में लायें। मुझे ऐसा लगता है कि हमारे इस कारखाने और छापखाने में सभी लोग, जिनमें टाइपिस्ट भी हों और कम्पोजीटर भी खेती करें। सब लोगों का मिलकर खेत में काम करना ही अपने भावी समाज का आदर्श है। बापू के समाज-रचना के चित्र की जितनी झाँकी अपने दैनिक जीवन में हम ला सकेंगे, उतनी आयेगी। यों तो सभी कबूल करते हैं और खास करके गांधी-विचारवाले ऐसा कहते हैं कि सर्वोदय का विचार सर्वोत्तम विचार है, लेकिन वह कितना शक्य है, इस बात की खबर नहीं।

कोचरब-आश्रम में विनोबाजी — अहमदाबाद २०-१२-'५८

सादा, निर्मल और स्वावलंबी जीवन बितायें,

[अहमदाबाद नगर में प्रवेश करने साथ ही पू० विनोबाजी कोचरब आश्रम में भेट करने गये। आश्रम में सर्वत्र घूमे और पुरानी स्मृतियाँ ताजी कीं। आश्रम का परिवार-मण्डल एकत्रित था। आरम्भमें मथुरीबेन ने 'सन्त परम हितकारी' भजन गाया। पू० विनोबाजी की आँखों से आँसू बह रहे थे। कुछ समय बाद यह सात्त्विक भावावेश शान्त होने पर उन्होंने कहा :]

पुरातन स्मृति

यहाँ मैं अधिक बोल नहीं सकता और न उसकी जरूरत ही है। बहुत-से भाव शब्दों से परे हुआ करते हैं। यदि कोई उन्हें शब्दों में बाँधने का प्रयत्न करता है तो वह सफल नहीं हो पाता।

७ जून, १९१६ का वह दिन था! उस दिन मैं पहली बार यहाँ आया और मुझे बापू के प्रथम दर्शन हुए। उसके बाद महीनों मैं यहाँ रहा। यह बापू का एक आद्य स्थान है। उसके बाद हम लोग साबरमती गये। ये सारी बातें अब इतिहास बन गयी हैं।

यहाँके प्रकाश से विश्व आलोकित हो उठेगा

यहाँ क्या चलता रहा, इसका वर्णन तो जो कोई यह स्थान देखने आये, उसे बताया जायगा या उसे लिख भी रखा गया है। फिर भी उस कहने या लिख रखने में वह बात नहीं आ सकती, जो कि यहाँ चलती थी। अतः दुनिया के लिए शब्द ही रह जायँगे। इन शब्दों से दिन-दिन अर्थ फैलता जायगा। आशा है कि यहाँसे प्रकाश की जो किरणें निकली हैं, वे धीरे-धीरे सारे भारत में ही नहीं, दुनिया में भी फैल जायँगी।

हमारे लिए अनादि अनन्त प्रकाश का उद्गम-स्थान

यह कहना भी ठीक नहीं कि यह उस प्रकाश का उद्गम-स्थान है, जो अनादि और अनन्त माना जाता है। कारण, उसका उद्गम-स्थान कहाँ है, यह कोई भी नहीं जानता। वह प्रकाश अनादि है और अनन्त तक रहनेवाला है।

इसलिए अपने लिए यह कहा जाय कि मुझ जैसे के लिए इस प्रकाश की उपलब्धि यहाँ हुई, अतः अपनी दृष्टि से मैं इसे आद्य-स्थान कहता हूँ। यह वर्णन मेरे तक ही सीमित है।

साथियों को सलाह

मैं आशा रखता हूँ कि यहाँके भाइयों को बापू ने जो विचार दिये हैं, उनपर ध्यान रखकर वे सादा, स्वच्छ, निर्मल और स्वावलम्बी जीवन बिताने की कोशिश करेंगे। ● ● ●

अनुक्रम

१. अहिंसा के व्यापक····	चित्रासणी के मार्ग में	१ जनवरी ४९
२. ग्राम-स्वराज्य में····	गुंदी	१६ दिसंबर ५०
३. जातिभेद और····	वासद	३१ अक्तूबर ५१
४. सर्वोदय के विचार को····	अहमदाबाद	२१ दिसंबर ५५
५. सादा, निर्मल और····	अहमदाबाद	२० दिसंबर ५६

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।